विविध सिविल

माननीय न्यायमूर्ति एम. एल. वर्मा के समक्ष

देव राज बावा, अपीलकर्ता-याचिकाकर्ता

बनाम

ओम प्रकाश गुप्ता और अन्य, उत्तरदाता।

1974 का सिविल विविध संख्या 5296-सी।

में

1973 की नियमित प्रथम अपील संख्या 186।

15 जनवरी, 1975।

हरियाणा शहरी (किराया और बेदखली का नियंत्रण) अधिनियम (1973 का 11) •धारा 2 (एच) और 24 - पूर्वी पंजाब शहरी किराया प्रतिबंध अधिनियम (1949 का III) - धारा 2 (i) - हरियाणा अधिनियम – क्या भावी - इस अधिनियम में दी गई किरायेदार की परिभाषा - क्या लंबित मामलों पर लागू होती है - विधियों की व्याख्या - कानून में परिवर्तन - क्या लंबित मामलों पर निर्णय लेते समय न्यायालयों द्वारा ध्यान दिया जाना चाहिए।

यह अभी निर्धारित किया गया कि हरियाणा शहरी (किराया और बेदखली पर नियंत्रण) अधिनियम, 1973 की धारा 24 एक स्पष्ट संकेत देती है कि अधिनियम भावी है और इसमें पूर्वव्यापी होने का कुछ भी नहीं है। दूसरी ओर उक्त प्रावधान में "कोई भी कार्यवाही लंबित या पारित आदेश" शब्द अप्रतिबंधित हैं और यह इंगित करने के लिए एक लंबा रास्ता तय करते हैं कि सिविल अदालतों में लंबित मुकदमों और यहां तक कि उससे उत्पन्न होने वाली अपीलों सहित कोई भी कार्यवाही, और सिविल मुकदमों में पारित डिक्री सहित कोई भी आदेश बचाया जाता है और इसे पूर्वी पंजाब शहरी किराया प्रतिबंध अधिनियम,1949 के प्रावधानों के अनुसार निपटाया जाना चाहिए। पंजाब अधिनियम को

निरस्त नहीं किया गया है और जहां तक हरियाणा अधिनियम के प्रवर्तन से पहले पारित अपील और डिक्री सहित लंबित कार्यवाही का संबंध है, इसे लागू माना जाना चाहिए। इसलिए हरियाणा अधिनियम में किरायेदार शब्द की बढ़ी हुई परिभाषा पंजाब अधिनियम के तहत लंबित मामलों पर लागू नहीं होती है।

यह अभी निर्धारित किया गया कि किसी भी नए अधिनियमन द्वारा लाए गए कानून में बदलाव को ध्यान में रखा जाना चाहिए, भले ही पुराने अधिनियमन को नए अधिनियमन द्वारा वाद में डिक्री पारित करने के बाद और अपील के लंबित रहने के दौरान निरस्त कर दिया गया हो। तथापि, यह सिद्धांत इस योग्यता के अधीन है कि नए अधिनियमन की भाषा उसके स्थापित नियमों के अनुसार इसकी व्याख्या पर इस निष्कर्ष की अनुमति देती है कि नए अधिनियमन के प्रावधान लंबित मामलों पर लागू होते हैं। यदि विधायिका नए अधिनियमन को प्रकृति में भावी बनाती है, तो यह सभी लंबित मामलों में लागू नहीं होगा।

सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा 151 के साथ आदेश 41 नियम 27 के तहत आवेदन, प्रार्थना करता है कि मामले को एक अतिरिक्त मुद्दा तैयार करने के बाद ट्रायल कोर्ट में भेज दिया जाए और पार्टियों को उस मुद्दे पर सबूत देने का अवसर दिया जाए।

अपीलकर्ता की ओर से वरिष्ठ अधिवक्ता जगन नाथ कौशल, उनके साथ अधिवक्ता अशोक भान।

उत्तरदाताओं की ओर से वरिष्ठ अधिवक्ता आनंद स्वरूप, अधिवक्ता आर. एस. मित्तल उनके साथ।

आदेश

न्यायमूर्ति वर्मा

इस दुकान के मालिक दया किशन ने 1 अक्टूबर, 1949 से इसे 11 महीने के लिए डॉ. हंस राज को पट्टे पर दिया था। उक्त पट्टा 31 अगस्त, 1950 को समाप्त हो गया और उसके बाद डॉ. हंस राज पूर्वी पंजाब शहरी किराया प्रतिबंध अधिनियम, 1949 (इसके बाद पुराना अधिनियम कहा जाता है) के प्रावधानों के तहत उन्हें उपलब्ध संरक्षण के कारण इसके कब्जे में बने रहे। इसलिए, वह 18 फरवरी, 1970 को एक वैधानिक किरायेदार थे, जब उनकी मृत्यु हो गई। वह अपने पीछे अपने बेटे- देव राज (अब अपीलकर्ता) और बेटी- श्रीमती राज मित्तर को छोड़ गए। दया किशन ने 20 नवंबर, 1957 को ओम प्रकाश को दुकान बेच दी। इसलिए, ओम प्रकाश ने देव राज, श्रीमती राज मित्तर, बिशन दास और धरम पाल पर दुकान पर कब्जा करने और 18 फरवरी, 1970 से 100 रुपये प्रति माह की दर से "अन्तःकालीन लाभ" की वसूली के लिए मुकदमा दायर किया, जिसमें आरोप लगाया गया था कि बिशन दास और धरम पाल बिना किसी अधिकार या हित के इसके भौतिक कब्जे में थे और देव राज और श्रीमती राज मित्तर को उनकी मृत्यु पर डॉ हंस राज से किरायेदारी का कोई अधिकार विरासत में नहीं मिला क्योंकि वैधानिक किरायेदार होने के नाते उनके (डॉ हंस राज) पास ऐसा कोई अधिकार नहीं था। बिशन दास और धरम पाल ने लिखित बयान दर्ज नहीं कराया। इस मुकदमे का विरोध देव राज और श्रीमती राज मित्तर ने किया था। उन्होंने स्वीकार किया कि ओम प्रकाश दुकान के मालिक थे और उन्होंने दलील दी कि दुकान को संयुक्त हिंदू परिवार की ओर से पट्टे पर लिया गया था, जिसमें वे और डॉ. हंस राज शामिल थे। उन्होंने विकल्प में दलील दी कि डॉ. हंस राज एक मासिक किरायेदार थे और इस प्रकार, उनके द्वारा रखे गए किरायेदारी के अधिकार उन्हें विरासत में मिले थे, कि बिशन दास और धरम पाल उनके कर्मचारियों के रूप में संयुक्त हिंदू परिवार का व्यवसाय कर रहे थे और मुकदमा सिविल कोर्ट द्वारा संज्ञेय नहीं था। ट्रायल कोर्ट ने उनके द्वारा उठाए गए तर्कों को खारिज कर दिया और ओम प्रकाश के दावे को स्वीकार करते हुए, दुकान के कब्जे और 30 रुपये प्रति माह की दर से "अन्तःकालीन लाभ" की डिक्री दी। उक्त डिक्री से व्यथित होकर देव राज इस न्यायालय में अपील में आया।अपील के लंबित रहने के दौरान पुराने अधिनियम को निरस्त कर दिया गया था और इसे हरियाणा शहरी (किराया और बेदखली का नियंत्रण)

अधिनियम, 1973 (इसके बाद नया अधिनियम कहा जाता है) द्वारा प्रतिस्थापित किया गया था जो 25 अप्रैल, 1973 को लागू हुआ था।

चूंकि नए अधिनियम द्वारा 'किरायेदार' की परिभाषा का दायरा और सीमा बढ़ा दी गई है, इसलिए देव राज ने सिविल विविध संख्या 5296/सी-1974 के रूप में पंजीकृत इस आवेदन को यह कहते हुए प्रस्तुत किया कि चूंकि वह और श्रीमती राज मित्तर डॉ. हंस राज की मृत्यु के समय उनके बेटे और बेटी होने के नाते उनके साथ रह रहे थे, इसलिए वे किरायेदार की उक्त परिभाषा के अंतर्गत आते हैं और नए अधिनियम की धारा 13 के तहत दुकान से निष्कासन के खिलाफ सुरक्षा के हकदार थे और इसलिए निम्नलिखित मुद्दा तैयार किया जाए:

'क्या अपीलकर्ता नए अधिनियम के प्रावधानों के मद्देनजर किरायेदार बन गया है।

और मामले को ट्रायल कोर्ट को भेज दिया जाए ताकि उस पर पार्टियों के साक्ष्य दर्ज किए जा सकें। ओम प्रकाश द्वारा उक्त आवेदन का विरोध किया गया है और इस आदेश द्वारा इसका निपटारा किया जा रहा है।

2. आवेदन के समर्थन में अपीलकर्ता के विद्वान वकील श्री जेएन कौशल ने दो दलीलें दी हैं; पहला, कि वाद की पुन: सुनवाई के दौरान अपील पर सुनवाई करते हुए, इस न्यायालय को नए अधिनियम द्वारा लाए गए कानून में बदलाव को ध्यान में रखना होगा और दूसरा, चूंकि अपीलकर्ता और श्रीमती राज मित्तर डॉ. हंस राज के बेटे और बेटी होने के नाते उनकी मृत्यु के समय उनके साथ रह रहे थे, इसलिए वे 'किरायेदार' की परिभाषा के आधार पर किरायेदार बन गए हैं और दुकान से निष्कासन के खिलाफ नए अधिनियम की धारा 13 के तहत उपलब्ध सुरक्षा के हकदार हैं। आवेदन का विरोध करते हुए, ओम प्रकाश के वकील श्री आनंद स्वरूप ने तर्क दिया कि उन्होंने (ओम प्रकाश) ने शीर्षक के आधार पर दुकान के कब्जे का दावा करने का निहित अधिकार हासिल कर लिया था और अपीलकर्ता और अन्य प्रतिवादी अतिचारी होने के कारण दुकान से बेदखल होने के लिए उत्तरदायी थे। उनका तर्क यह है कि डॉ. हंस राज एक वैधानिक किरायेदार थे और पुराने अधिनियम के तहत दुकान से निष्कासन के खिलाफ उन्हें उपलब्ध सुरक्षा व्यक्तिगत लाभ थी, लेकिन उन्हें दुकान पर कब्जा करने का कोई अधिकार नहीं

था और इसलिए, उनकी (डॉ. हंस राज) मृत्यु पर अपीलकर्ता या श्रीमती राज मित्तर को ऐसा कोई अधिकार नहीं दिया जा सकता था; और न तो ओम प्रकाश को उपलब्ध निहित अधिकार और न ही दुकान से बेदखली के लिए अपीलकर्ता और अन्य प्रतिवादियों के दायित्व को पुराने अधिनियम के निरसन के कारण निरस्त किया जा सकता है।

3. सिद्धांत अच्छी तरह से मान्यता प्राप्त है कि अपील की अदालत त्रुटि की अदालत नहीं है, बल्कि पुन: सुनवाई की अदालत है और यह जो डिक्री या आदेश पारित करता है, वह ट्रायल कोर्ट में स्थापित मुकदमे या अन्य कार्यवाही में पारित किया जाता है, और ट्रायल कोर्ट द्वारा पारित डिक्री या आदेश अपीलीय अदालत के डिक्री या आदेश में विलय हो जाता है। दूसरे शब्दों में, जब अपीलीय न्यायालय किसी अपील का निर्णय करता है, तो वह स्वयं वाद का निर्णय करता है। इसलिए, यह नहीं कहा जा सकता है कि अपीलीय न्यायालय अपील के लंबित रहने के दौरान कानून में लाए गए परिवर्तन को ध्यान में रखेगा। पैटरसन बनाम अलबामा राज्य (1) में किए गए अवलोकन -

> "हमने अक्सर माना है कि हमारे अपीलीय अधिकार क्षेत्र का प्रयोग करते हुए हमारे पास न केवल समीक्षाधीन निर्णय में त्रुटि को ठीक करने की शक्ति है, बल्कि न्याय की आवश्यकता के अनुसार मामले का निपटान करने की भी शक्ति है। और यह निर्धारित करने में कि न्याय की क्या आवश्यकता है, न्यायालय किसी भी बदलाव पर विचार करने के लिए बाध्य है, या तो वास्तव में या कानून में, जो निर्णय दर्ज होने के बाद से अतिरंजित है।

लचमेश्वर प्रसाद शुकुल और अन्य में अनुमोदित किए गए थे । केश्वर लाई चौधरी और अन्य (2)। उपरोक्त सिद्धांत की पुष्टि सुप्रीम कोर्ट ने राम सरूप और अन्य बनाम मुंशी और अन्य (3) में की थी, और इस अदालत ने राम लला बनाम राजा राम और अन्य (4) में स्वीकार किया था । इसलिए, मैं अपीलकर्ता के विद्वान वकील से बेहिचक सहमत हूं कि नए

अधिनियम द्वारा लाए गए कानून में बदलाव को ध्यान में रखा जाना चाहिए, भले ही मुकदमे में डिक्री पारित होने के बाद और अपील के लंबित रहने के दौरान पुराने अधिनियम को नए अधिनियम द्वारा निरस्त कर दिया गया हो। लेकिन यह इस योग्यता के अधीन है कि नए अधिनियम की भाषा अनुमति देती है और क़ानून की व्याख्या का नियम इस अनुमान की अनुमति देता है कि विधायिका नए अधिनियम के प्रावधानों को पूर्वव्यापी प्रभाव देने का इरादा रखती है या दूसरे शब्दों में यह (नया अधिनियम) लंबित मामलों पर लागू होता है।

(1934) पृष्ठ 607 पर 294 यू.एस.

**(एक)** ए.आई.आर. 1941 एफ.सी.

**(दो)** ए.आई.आर. 1963 एस.सी. 553.

**(तीन)** 1960 पी.एल.आर.

**देव राज बावा *बनाम* ओम प्रकाश गुप्ता और अन्य (वर्मा, जे।**

'किरायेदार' की परिभाषाएँ - नीचे दी गई हैं पुराना और नया अधिनियम - इस प्रकार पढ़ें

पुराने अधिनियम की धारा 2 (i)

"किरायेदार" का अर्थ है कोई भी व्यक्ति जिसके द्वारा या जिसके खाते पर किसी भवन या किराए की भूमि के लिए किराया देय है और इसमें किरायेदार शामिल है जो किरायेदारी की समाप्ति के बाद भी कब्जे में है, लेकिन इसमें वह व्यक्ति शामिल नहीं है जिसे उसके किरायेदार द्वारा भवन या किराए कीभूमि के कब्जे में रखा गया है, जब तक कि मकान मालिक, या किसी ऐसे व्यक्ति की लिखित सहमति के साथ, जिसे सार्वजनिक बाजार, ठेला-स्टैंड या बूचड़खाने, दुकानों के लिए किराए या किराए का संग्रह नगरपालिका, शहर या अधिसूचित क्षेत्र समिति द्वारा खेती या पट्टे पर दिया गया हो;

नए अधिनियम की धारा 2(एच)

"किरायेदार" का अर्थ है कोई भी व्यक्ति जिसके द्वारा या जिसके खाते पर किराया है

किसी भवन या किराए की भूमि के लिए देय और इसमें किरायेदार शामिल है जो अपनी किरायेदारी की समाप्ति के बाद और ऐसे व्यक्ति की मृत्यु की स्थिति में कब्जे में बना रहता है, जैसे कि उसके उत्तराधिकारी, जैसा कि इस अधिनियम में संलग्न अनुसूची में उल्लिखित हैं और जो आमतौर पर उसकी मृत्यु के समय उसके साथ रह रहे थे, लेकिन इसमें वह व्यक्ति शामिल नहीं है जिसे उसके किरायेदार द्वारा भवन या किराए की भूमि के कब्जे में रखा गया है, मकान मालिक या व्यक्ति की लिखित सहमति के बिना, जिसे सार्वजनिक

बाजार, कार्ट-स्टैंड या बूचड़खाने में किराए नगरपालिका, शहर या अधिसूचित क्षेत्र या शुल्क का संग्रह या दुकानों के लिए समिति द्वारा पट्टे पर दिया गया है।

किराए की खेती की गई है, या

शब्द "और ऐसे व्यक्ति की मृत्यु की स्थिति में, उसके उत्तराधिकारी, जो इस अधिनियम में संलग्न अनुसूची में उल्लिखित हैं, और जो उसकी मृत्यु के समय आमतौर पर उसके साथ रह रहे थे" शब्द पुराने अधिनियम के 'किरायेदार' की परिभाषा में नहीं थे और नए अधिनियम द्वारा परिभाषा में पेश किए गए हैं। इस प्रकार, यह निर्विवाद है कि नए अधिनियम द्वारा 'किरायेदार' की परिभाषा को बढ़ाया गया है ताकि बेटे और बेटी और अनुसूची में उल्लिखित अन्य उत्तराधिकारियों को वैधानिक किरायेदार का दर्जा दिया जा सके, बशर्ते कि वे आमतौर पर उसकी मृत्यु के समय वैधानिक किरायेदार के साथ रह रहे हों। नए अधिनियम की धारा 13 में यह अधिदेश है कि किसी भवन या किराए की भूमि के कब्जे वाले किरायेदार को उस धारा के प्रावधानों के अनुसार छोड़कर वहां से बेदखल नहीं किया जाएगा। इसलिए, यह स्पष्ट है कि नए अधिनियम के प्रावधानों के तहत एक वैधानिक किरायेदार को उपलब्ध बेदखली के खिलाफ संरक्षण का दावा उसके पुत्र और पुत्री तथा अनुसूची में उल्लिखित किसी अन्य उत्तराधिकारी द्वारा, उसकी मृत्यु के बाद, किया जा सकता है, क्योंकि वह उस समय सामान्य रूप से उसके साथ रह रहा था। नए अधिनियम द्वारा कानून में लाए गए उपरोक्त परिवर्तन को ध्यान में रखते हुए, मैं अपीलकर्ता के विद्वान वकील से सहमत होने में संकोच नहीं करूंगा कि वह (अपीलकर्ता) या श्रीमती राज मित्तर तत्काल मुकदमे में दुकान से बेदखली के लिए उत्तरदायी नहीं होंगे यदि यह दिखाया जा सकता है कि वे आमतौर पर डॉ हंस राज की मृत्यु के समय उनके साथ रह रहे थे और यह भी अभिनिर्धारित किया जाता है कि नया अधिनियम लागू है। यदि यह दृष्टिकोण लिया जाता है, तो प्रस्तावित मुद्दे को तैयार करने और उस पर साक्ष्य दर्ज करने की आवश्यकता है। लेकिन जैसा कि वर्तमान में देखा जाएगा, नया अधिनियम, विशेष रूप से धारा 24 के प्रावधानों को देखते हुए, मामले पर लागू नहीं होता है।

जैसा कि दिगंबर पॉल घोष और अन्य बनाम टीउफजुद्दी इजारादर और अन्य (5) में देखा गया है, इस बात से इनकार नहीं किया जा सकता है कि बचत खंडों के अभाव में किसी क़ानून के निरसन का प्रभाव यह है कि इसे इस तरह से माना जाना चाहिए जैसे कि इस तरह निरस्त किया गया क़ानून कभी अस्तित्व में ही नहीं था। यह तब तक लागू नहीं होता है, जब तक कि पुराने क़ानून को संरक्षित करने वाले नए क़ानून में कोई खंड न हो; अंतर्निहित सिद्धांत यह है कि एक ही मामले में दो असंगत कोड नहीं हो सकते हैं, और यदि पिछले क़ानून को संरक्षित किया जाना है तो इसे स्पष्ट रूप से किया जाना चाहिए। प्रत्येक कानून भावी है और सामान्य धारणा इसके पूर्वव्यापी होने के खिलाफ है। यह संविधियों की व्याख्या का एक मौलिक नियम है कि किसी भी क़ानून को पूर्वव्यापी संचालन नहीं माना जाएगा, जब तक कि ऐसा निर्माण अधिनियम की शर्तों में बहुत स्पष्ट रूप से प्रकट न हो, या आवश्यक और विशिष्ट निहितार्थ से उत्पन्न न हो और निर्माण का कोई भी नियम इससे अधिक दृढ़ता से स्थापित नहीं किया जाता है कि एक पूर्वव्यापी संचालन किसी क़ानून को नहीं दिया जाना है ताकि मौजूदा अधिकार या दायित्व को कम किया जा सके। सिवाय जहां तक प्रक्रिया का संबंध है। पंजाब सामान्य खंड अधिनियम की धारा 4 के खंड (सी) का उद्देश्य और उद्देश्य भी यही है, जो हरियाणा राज्य पर लागू होता है और सामान्य खंड अधिनियम, 1897 की धारा 6 के खंड से मेल खाता है। नए अधिनियम की धारा 24 का संगत प्रावधान निम्नानुसार है:-

> "बशर्ते कि इस तरह के निरसन से इस अधिनियम के लागू होने से ठीक पहले लंबित किसी भी कार्यवाही या पारित आदेश को प्रभावित नहीं किया जाएगा, जिसे जारी रखा जाएगा और निपटाया या लागू किया जाएगा जैसे कि उक्त अधिनियम को निरस्त नहीं किया गया था।

(5) ए.आई.आर. 1934 कलकत्ता 80(2).

(6) उपरोक्त प्रावधान स्पष्ट संकेत देते हैं कि नया अधिनियम भावी है और इसने लंबित मामलों और पहले से पारित आदेशों के संबंध में, पुराने अधिनियम को संरक्षित किया है। अपीलकर्ता के विद्वान वकील श्री जे. एन. कौशल का विचार है कि उपरोक्त प्रावधान का उद्देश्य पंजाब सामान्य खंड अधिनियम की धारा 4 के खंड (सी) के उद्देश्य से अधिक कुछ नहीं है। इसलिए, यह 25 अप्रैल, 1973 को नए अधिनियम के लागू होने से पहले पुराने अधिनियम या उसके तहत पारित किसी भी आदेश के प्रावधानों के तहत लंबित कार्यवाही, यदि कोई हो, को बचा सकता है, लेकिन डिक्री जो किसी मुकदमे में सिविल कोर्ट द्वारा पारित अपील के अधीन है, उपरोक्त प्रावधान द्वारा संरक्षित नहीं है। मैं उक्त दृष्टिकोण से सहमत होने में असमर्थ हूं। अधिनियम की धारा 24 के प्रावधान की भाषा, जिसे ऊपर पुन: प्रस्तुत किया गया है, स्पष्ट है और इसमें ऐसा कुछ भी नहीं है जो इसके आवेदन को पुराने अधिनियम के तहत लंबित कार्यवाही या पारित आदेशों तक सीमित रखता हो। उक्त प्रावधान में "कोई भी कार्यवाही लंबित या पारित आदेश" शब्द अप्रतिबंधित हैं और यह इंगित करने के लिए एक लंबा रास्ता तय करते हैं कि सिविल न्यायालयों में लंबित मुकदमों और यहां तक कि उससे उत्पन्न होने वाली अपीलों सहित कोई भी कार्यवाही, और सिविल मुकदमों में पारित डिक्री सहित कोई भी आदेश बचाया जाता है और इसे पुराने अधिनियम के प्रावधानों के अनुसार निपटाया जाना चाहिए। और यह माना जाना चाहिए कि पुराने अधिनियम को निरस्त नहीं किया गया है और जहां तक 25 अप्रैल, 1973 से पहले पारित अपील और डिक्री सहित लंबित कार्यवाही का संबंध है, इसे लागू माना जाना चाहिए। इस प्रकार, मैं, अपीलकर्ता के विद्वान वकील से असहमति में, यह निष्कर्ष निकालने में कोई अनिच्छा नहीं रखता कि अपील पर निर्णय लिया जाना है और विचाराधीन डिक्री की शुद्धता को पुराने अधिनियम के प्रावधानों के अनुसार निर्धारित किया जाना है और नए अधिनियम के प्रावधानों का कोई

नोटिस नहीं लिया जा सकता है - मामले के उस दृष्टिकोण में, यह मुद्दा कि क्या अपीलकर्ता और श्रीमती राज मित्तर नए अधिनियम में दी गई 'किरायेदार' की परिभाषा के आधार पर उसमें निहित योग्यता को साबित करके खुद को वैधानिक किरायेदार होने का दावा कर सकते हैं, पूरी तरह से अप्रासंगिक है। इसलिए, इस आवेदन में कोई दम नहीं है और अपीलकर्ता द्वारा सुझाए गए मुद्दे को तैयार करने की कोई आवश्यकता नहीं है, उस पर साक्ष्य दर्ज करने की तो बिल्कुल भी आवश्यकता नहीं है। इसलिए, मैं 1974 के सीएम नंबर 5296'सी को बिना किसी लागत के खारिज करता हूं।

बी.एस.जी.

अस्वीकरण : स्थानीय भाषा में अनुवादित निर्णय वादी के सीमित उपयोग के लिए है ताकि वह अपनी भाषा में इसे समझ सके और किसी अन्य उद्देश्य के लिए इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है। सभी व्यवहारिक और आधिकारिक उद्देश्यो के लिए निर्णय का अंग्रेजी संस्करण प्रमाणिक होगा और निष्पादन और कार्यान्वयन के उद्देश्य के लिए उपयुक्त रहेगा।

रश्मीत कौर

प्रशिक्षु न्यायिक अधिकारी

(Trainee Judicial Officer)

गुरुग्राम, हरियाणा